॥दोहा॥

श्री रामचन्द्र कृपालु भजुमन

हरण भवभय दारुणं ।

नव कंज लोचन कंज मुख

कर कंज पद कंजारुणं ॥१॥

कन्दर्प अगणित अमित छवि

नव नील नीरद सुन्दरं ।

पटपीत मानहुँ तडित रुचि शुचि

नोमि जनक सुतावरं ॥२॥

भजु दीनबन्धु दिनेश दानव

दैत्य वंश निकन्दनं ।

रघुनन्द आनन्द कन्द कोशल

चन्द दशरथ नन्दनं ॥३॥

शिर मुकुट कुंडल तिलक

चारु उदारु अङ्ग विभूषणं ।

आजानु भुज शर चाप धर

संग्राम जित खरदूषणं ॥४॥

इति वदति तुलसीदास शंकर

शेष मुनि मन रंजनं ।

मम् हृदय कंज निवास कुरु

कामादि खलदल गंजनं ॥५॥

मन जाहि राच्यो मिलहि सो

वर सहज सुन्दर सांवरो ।

करुणा निधान सुजान शील

स्नेह जानत रावरो ॥६॥

एहि भांति गौरी असीस सुन सिय

सहित हिय हरषित अली।

तुलसी भवानिहि पूजी पुनि-पुनि

मुदित मन मन्दिर चली ॥७॥

॥सोरठा॥

जानी गौरी अनुकूल सिय

हिय हरषु न जाइ कहि ।

मंजुल मंगल मूल वाम

अङ्ग फरकन लगे।

रचयिता: गोस्वामी तुलसीदास